B.A. III-Part-Philosophy (H) - Paper-VI

नारीवाद (Feminism)

ईश्वर की सृष्टि में नारी सदैव ही पुरुष की शाश्वत प्रेरणा का स्रोत रही है। किसी भी समाज तथा राष्ट्र की प्रगति तथा विकास में नारी का विशेष योगदान रहा है। भारतीय धर्म-ग्रंथों में 'अर्द्धनारीश्वर' की परिकल्पना भी इस बात का साक्षी है कि नर और नारी के बीच किसी तरह की विभेद रेखा नहीं खींची जा सकती है। नारी की गरिमामयी शक्ति का प्रमाण वैदिक काल से लेकर आजतक देखने को मिलता है। धर्मग्रंथों में इसके संबंध में कहा गया है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला: क्रिया। (मनुसंहिता) 9।165

(अर्थात् जिस कुल में स्त्रियों की पूजा की जाती है, उस कुल में देवता प्रसन्न रहते हैं। जहाँ ऐसा नहीं किया जाता, वहाँ सभी क्रियायें निष्फल हो जाती हैं।) इसीतरह मार्कण्डेय पुराण में नारी को आदिशक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। राजा जनक की राजसभा में गार्गी ने अपनी अद्भुत तर्कशक्ति से याज्ञवल्क्य को चौंका दिया था। वैदिक और उत्तर वैदिक काल में को गरिमामय स्थान प्राप्त थे। पौराणिक काल में उन्हें शक्ति-स्वरूपा समझकर सम्मानित किया गया। लेकिन धीरे धीरे कालक्रम में नारियों की यह छवि धूमिल पड़ने लगी। परन्तु फिर भी महाकवि जयशंकर प्रसाद ने अपनी निम्न पंक्तियों में नारी को बहुत उच्च स्थान दिया है—

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।"

11वीं से 19वीं शताब्दी तक नारियों की स्थिति में काफी गिरावट आयी। मुगलशासन, सामन्ती व्यवस्था, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने नारियों को न सिर्फ उपभोग की वस्तु बनाया, अपितु उन्हें दीन-हीन एवं कमजोर भी बना दिया। मध्यकाल आते-आते नारियों की स्थिति में काफी गिरावट आ गयी। अशिक्षा एवं रूढ़ियों की शिकार होकर ये घर की चहारदीवारी में कैद होकर रह गयी और उनकी पहचान अबला, रमणी या भोग्या आदि के रूप में की जाने लगी। अंग्रेजों ने भी नारी पर कम अत्याचार नहीं किया। नारी की मर्यादा के रक्षार्थ उन पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये गये। नारी की इस पीड़ा को राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने बड़े ही सुन्दर ढंग से अपनी कविता में इसप्रकार व्यक्त किया—

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आंचल में है दूध और आँखों में पानी।"

समय परिवर्तनशील होता है। हर रात की सुबह, हर दुःख के बाद सुख, और हर अंधकार के पीछे उजाला दिखना होना अवश्यम्भावी है। 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में नारियों के प्रति समाज में फैली कुरीतियों के

Scanned with CamScanner

विरुद्ध राजाराममोहनराय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, दयानन्द सरस्वती जैसे समाजसुधारकों ने उनके जीवन में आये अँधेरों को दूर करने का प्रयास किया। ब्रिटिश सरकार का काल नारियों के पुनरुत्थान का युग था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में साक्षरता की स्थिति में आत्यधिक सुधार हुआ। जिसके फलस्वरूप नारीवाद उत्पन्न हुआ।

वर्तमान समय में, नारीवाद एक जीवन्त और परिलक्षित सामाजिक आंदोलन है। नारीवाद शब्द का प्रयोग सामान्यत: उस विचारधारा और आंदोलन के लिए किया जाता है जिसका उद्देश्य सदियों से चले आ रहे पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं को शोषण, अन्याय, उत्पीड़न आदि विभिन्न प्रकार के यातनाओं से छुटकारा दिलाते हुए, उन्हें उचित स्थान एवं मुक्ति दिलाना है। अत: नारीवाद एक ऐसा विश्वव्यापी आन्दोलन एवं विचारधाराओं का संग्रह है, जिसका उद्देश्य महिलाओं के लिए पुरुष के समान राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार दिलाना है।

सिमोन के अनुसार पुरुष महिलाओं को अनेक प्रकार से हर स्तर पर शोषित करते हैं। वह स्वयं को उत्कृष्ट और स्त्री को एक निम्न व्यक्ति या दोयम दर्जे की वस्तु, विकृत, नगण्य और अपूरा मानते हैं। सिमोन कहती है "नारीवाद" से मेरा तात्पर्य है कि कुछ खास स्त्री मुद्दों पर वर्ग संघर्ष से हटकर स्वतंत्र रूप से संघर्ष करना है। नारीवाद, पितृसत्ता को नारी के शोषण एवं निम्न स्थिति के पीछे मुख्य सामाजिक कारक मानता है। पितृसत्तात्मकता की जड़ें हमारे विचारों और संस्कृति में बहुत गहरी है। इस परम्परा में महिलाओं को दबाने, शोषित करने तथा पुरुषों को हावी होने के लिए सिखाया गया है। अत: इस पुरुष प्रभुत्व से मुक्ति प्राप्त करने के लिए समाज के सभी वर्गों की महिलाओं को एकजुट होने की आवश्यकता है।

नारीवादी सिद्धान्त महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए बराबरी की मांग करते हैं। यद्यपि सभी नारीवादी लिंग समानता की बात करते हैं, लेकिन इसके लिए वे विभिन्न तरीके अपनाते हैं जो निम्नलिखित है —

(i) उदारवादी नारीवाद (Liberal Feminism) — इसके अनुसार नारीवादियों ने पुरुषों के समान महिलाओं के कानूनी और राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने का समर्थन किया है। महिलाओं के व्यक्तित्व में भी पुरुषों के समान उत्साह, आकांक्षा, योग्यता, तर्कशक्ति, मानसिक क्षमता और निपुणता विद्यमान है। इसलिए उन्हें भी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में समान अवसर दिया जाना चाहिए। इसलिए यह उदारवादी नारीवाद विचारधारा सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की सहभागिता का समर्थन करते हुए तथा एक मानवीय हस्ती होने के नाते उनकी क्षमताओं के फलन

- फूलने के लिए विभिन्न अवसरों की माँग करती है।

(ii) उग्र नारीवाद (Radical Feminism) – उग्र नारीवाद का उद्देश्य लिंगों के बीच व्याप्त सभी विभेदों को प्रकाश में लाना है। यह विभेद हमारी निजी जिन्दगी, संस्कारों, परम्पराओं, व्यक्तिगत संबंधों एवं मानसिकता आदि में विस्तृत रूप से फैला हुआ है। इसी बात को साधना आर्य द्वारा 'नारीवादी राजनीतिक संघर्ष एवं मुद्दे' पुस्तक में इस प्रकार व्यक्त किया गया है –

" उग्र नारीवाद पितृसत्ता अर्थात महिलाओं पर पुरुषों के प्रभुत्व की प्रणाली के प्रति अपने विरोध में अत्यधिक प्रखर है। इनका मानना है कि लिंग के आधार पर किया गया विभाजन प्रकृति का नहीं है, वरन् उसका निर्माता पितृसत्तात्मक समाज है और वही इसे जारी रखे हुए है। विभिन्न संस्कृतियाँ भले ही विभिन्न मूल्यों को प्रतिपादित करें, लेकिन आमतौर पर पुरुषों को सकारात्मक 'आक्रामक', 'प्रभावशाली', 'वस्तुनिष्ठ', 'मजबूत' आदि और महिलाओं को 'कमजोर', 'निष्क्रिय', 'भावुक', 'गैर-जिम्मेदार', 'रहस्यमय', 'ढोंगी' समझा जाता है। पितृसत्ता को समझने के लिए उग्र नारीवादियों ने व्यक्तिगत और राजनीतिक आलोचना का उपयोग किया है।" इलीनर एलिसिन जैगर का मानना है – "उग्र नारीवाद विचार और व्यवहार, समाज के क्रांतिकारी रूपान्तरण का अनिवार्य हिस्सा है, लेकिन अपने आप में वह अपर्याप्त है। इनका यह भी आरोप है कि उन्होंने समाज में स्त्री और पुरुष के संबंधों को भी बिगाड़ा है। वह जैविक निर्धारणवाद पर आधारित व्यवस्था पर चोट करती है।"

(iii) मार्क्सवादी नारीवाद (Marxist Feminism) – मार्क्सवादी नारीवादी विचारधारा पूँजीवादी व्यवस्था का सबसे बड़ा आलोचक है क्योंकि उनका मानना है कि पूँजीवादी व्यवस्था में पूंजीपतियों को शोषण करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो जाती है। इसमें नारी का शोषण अधीनता के कारण अधिक होता है। महिलाएँ अपने घरेलू कामों और प्रजनन कार्यों से अपने अस्तित्व को भूल जाती हैं। दूसरी ओर श्रमिक अपने उत्पादन कार्यों में संलग्न रहने के कारण अपनी श्रम शक्ति से अपने सहकर्मियों के साथ अलगाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस विचारधारा का उद्देश्य महिलाओं की अधीनता, उत्पादन के तरीके और महिलाओं की स्थिति के बीच के रिश्ते को सुधारने पर बल देता है।

(iv) समाजवादी नारीवाद (Socialistic Feminism) – समाजवादी नारीवाद वर्ग और लिंग रूपी दोनों प्रथाओं को समाप्त करना चाहता है। उनका उद्देश्य वर्तमान सामाजिक संरचना में शोषणवादी परम्परा को समाप्त करना है। इसके बाद एक नये शोषण मुक्त समाज का निर्माण करना है। इसके साथ ही साथ यह महिलाओं की समानता के लिए सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण का इस्तेमाल करता है।

(V) उत्तर आधुनिक नारीवाद (Post Modern Feminism) —

उत्तर आधुनिक नारीवाद की शुरुआत 1980 से मानी जाती है। इस नारीवादी विचारधारा में सीजोस, लूस इरीगारे और जूलिया क्रीसटेवा की अहम भूमिका है। इसमें महिला उत्पीड़न के विभिन्न पहलुओं को समझने की दिशा में एक गतिशील प्रयास है। इनके अनुसार स्त्री-पुरुष के वर्तमान संबंधों को बदला जाना चाहिए। 'सेक्स' और 'जेण्डर' में भेद स्थापित करना नारीवाद का सबसे बड़ा योगदान है। 'सेक्स' एक जैविक शब्दावली है। यह स्त्री और पुरुष में जैविक भेद को प्रदर्शित करती है, वहीं 'जेण्डर' शब्द स्त्री और पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव दिखाता है। इस तरह नारीवाद पुरुष-प्रधान व्यवस्था की आलोचना है। विकसित राष्ट्र हो या विकासशील सभी 'विश्व की नारियाँ' अपने अधिकारों नैतिकता एवं सांस्कृतिक मूल्यों को बचाने और पितृसत्ता और जंजीरों से मुक्ति प्राप्त करने में संलग्न हैं। 20वीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति तथा उनसे संबंधित समस्याओं को एक विश्व आयाम मिला, जिससे यह एक विश्वव्यापी चर्चा का विषय बनी। अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय महिला संस्थाओं का गठन हुआ। इसके अतिरिक्त नारी के लिए अनेक समितियाँ तथा उपसमितियाँ बनाई गयीं। 1980 ई० में तथा 1985 ई० में क्रमशः कोपेनहेगेन तथा नैरोबी में दो और विश्व महिला महासभा आयोजित की गई। 1995 में संयुक्त राष्ट्रसंघ ने बिजींग में चतुर्थ विश्व महिला महासभा आयोजित की गयी। इसमें नारी के मानवाधिकार को मान्यता दी गई। नारीवाद की अवधारणा को विभिन्न संदर्भों में देखा जा सकता है, जो निम्नलिखित है —

(i) यह महिला की पुरुष के प्रति अधीनता और महिला के विश्वव्यापी उत्पीड़न की प्रकृति के विरुद्ध एक दार्शनिक सिद्धान्त है।

(ii) यह एक सामाजिक-राजनीतिक सिद्धान्त है जो सभी महिलाओं को पुरुषों के प्रभुत्व और शोषण से मुक्त कराने में प्रयासरत है।

(iii) यह स्त्री-पुरुष संघर्ष का एक सामाजिक आन्दोलन है।

(iv) यह एक विचारधारा है जो पितृसत्तात्मक परंपरा वाले समाज के व्यवहारों एवं विचारधाराओं के विपरीत है।

डॉ० राम नारायण शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
दर्शनशास्त्र विभाग
जे० एन० एल० कॉलेज, मुंगेर